Research Paper E-ISSN NO : 2455-295X | VOLUME : 9 | ISSUE : 3 | MARCH 2023

स्वतंत्र भारत में पलायन : प्रवृतियाँ और प्रभाव

डॉ. संदीप कुमार मील [1]

[1] पोस्ट डॉक्टरल फैलो, भारतीय समाज विज्ञान अनुसंधान परिषद, राजनीति विज्ञान विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

ABSTRACT:

यह शोध–पत्र पलायन के ऐतिहासिक संदर्भों को विष्लेषित करने का प्रयास करता है जिसमें भारत की स्वतंत्रता के पष्चात पलायन के कारणों को रेखांकित करते हुए इसके लिए पैदा हुई परिस्थितियों का सामाजिक–राजनोतिक विष्लेषण किया गया है। पलायन की प्रवृतियों देखते हुए ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के मध्य संसाधनों का वितरण और इस वितरण के परिणामस्वरूप पैदा हुई पलायन की परिस्थितियों का भी विवेचन किया गया है ताकि यह स्पष्ट हो सके कि पलायन के कौन–से कारण संस्थागत या स्थाई कारणों में परिवर्तित हो गए है और कौन–से कारण मौसमी पलायन के आधार बने। इस पत्र में ऐतिहासिक विवेचनात्मक पद्धति का प्रयोग करते हुए द्वितीयक स्त्रोतों के आधार पर आंकड़ों को समाहित किया गया है।

KEYWORDS:

पलायन, रोजगार, ग्रामीण, विकास, शहरी

विश्लेषण –

पलायन की शुरुआत मानव सभ्यता में प्राचीन समय में भोजन की खोज के साथ ही हुई थी जो सभ्यता के विकास के साथ बढ़ती गई और वर्तमान में एक वैष्विक समस्या के रूप में उभरी है। कुछ जीववैज्ञानिक पलायन को जीवों द्वारा बहादुरी से एक स्थान से दूसरे स्थान पर की गई गति के रूप में देखते हैं। व्यवहारगत गति व्यक्तिगत स्तर पर देखो जाती है और पारिस्थितिकीय आधार पर गति कुल संख्या के स्तर पर देखी जाती है। इसे जीवों के मौसमी रूप से एक स्थान से दूसरे स्थान (ग्रीनबर्ग एंड मरा 2005) पर जाने के संदर्भ में भी देखा गया है। मानवीय संदर्भ में भी पलायन मनुष्यों के एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने को ही कहा गया है जो मानव सभ्यता के विकास के विभिन्न चरणों में अपने अर्थ को सांदर्भिक स्तर पर कुछ परिवर्तित जरूर करता रहा है। भूगोलविद् इसे जनसंख्या को परिवर्तित करने वाले सबसे प्रमुख कारक (कॉफी 1981) के रूप में मानते हैं। यह सामाजिक और राजनीतिक परिवर्तन के कारणों को समझने का विचार प्रदान करता है और यह सामाजिक, आर्थिक और पारिस्थितिकीय स्तर पर समस्याओं के साथ किये सामंजस्यों को समझने का आधार प्रदान करता ळें

भारतीय समाज में पलायन को देखा जाए तो यहाँ पर लगभग सभी धर्मों के साहित्य, दर्षन और इतिहास में पलायन को प्रमुखता से देखा जा सकता है। कबिलाई समाज से लेकर छोटे–छोटे गणराज्यों के दौर की जनश्रुतियों के स्पष्ट होता है कि ऐच्छिक, मौसमी और सामाजिक परिस्थितियों द्वारा निर्मित पलायन यहाँ पर मौजूद रहा है जो कुछ इलाकों में संस्थागत रूप भी ले चुका था लेकिन भारत के ब्रिटिष साम्राज्य के उपनिवेष बनने के बाद संस्थागत पलायन देष में बड़ा और अंततः उसे दादा भाई नारौजी ने 'ब्रैन ड्रैन' (नारौजी, 2020) के सिद्धांत से स्पष्ट किया। चूंकि पलायन अपने साथ प्रतिभा, संस्कृति और यहाँ तक कि इतिहास को भी एक स्थान से दूसरे स्थान ले जाता है जिसमें ब्रिटिष सरकार की उन नीतियों ने बड़ी भूमिका निभाई जो उपनिवेष को एक 'साधन' समझते थे। 20वीं सदी तक ब्रिटेन में औद्योगिकरण हो चुका था लेकिन अभी भी स्थिति ऐसी नहीं थी कि मानवीय श्रम को मषीनों ने पूरी तरह से हस्तानांतरित कर दिया हो। ऐसी स्थिति में जहाँ पर ब्रिटिष साम्राज्य लगातार अपना विस्तार भी करता जा रहा हो, सस्ता श्रम इसके लिए अपरिहार्य हो गया था जिसे पूरा करने के लिए हजारों की तादात में भारत से दक्षिण अफ्रीका और अन्य देषों में मजदूरों को ले जाया जाता था। गिरिराज किषोर ने 'पहला गिरमिटिया' (गिरीराज 2013) में बताया है कि किस प्रकार से दक्षिण अफ्रीका के मजदूरों के साथ महात्माँ गाँधी (गाँधी 1909) ने सबसे पहला 'सत्याग्रह' का प्रयोग किया। लोक साहित्य में पलायन को लेकर बहुत लिखा गया है जिसमें जिसमें बिखारी ठाकुर का 'बिदिसिया' (ठाकुर 2011) प्रमुख है। इस प्रकार से देखा जाए तो भारत के स्वतंत्रता आंदोलन में 'पलायन' प्रमुख देषज समस्या के रूप में उभरकर सामने आया था।

भारत में स्वतंत्रता के बाद समाज निर्माण की प्रमुख नीतियों में स्वावलंबी बनना महत्वपूर्ण था क्योंकि देष ने सदियों तक जो दासता सही थी उससे मुक्ति तो मिल गई थी लेकिन देष को भविष्य में एक न्यायपूर्ण समाज बनाने के लिए जरूरी था कि विकास का कोई चरणबद्ध मॉडल अपनाया जाए जिसका परिणाम योजनाबद्ध विकास की नीतियों के रूप में हुआ जो स्थानीय और आधारभूत संरचना (भगवती 1993) के विकास को प्रारंभिक पंचवर्षीय योजनाओं में देखा जा सकता है। स्वतंत्र भारत में पलायन की प्रवृतियों को मूलरूप से दो भागों में विभाजित किया जा सकता है, पहले भाग में पलायन की उपनिवेषवादी प्रवृतियाँ हैं और दूसरे भाग में पलायन की देषज प्रवृतियाँ हैं। उपनिवेषवादी प्रवृतियों उत्पति साम्राज्यवादी दासता के दौरान जिस तरह से समाज का आधुनीकीकरण हुआ और षिक्षा के कारण शहरीकरण बढ़ा, उसी के साथ शहरों के आसपास ही औधोगिक विकास केंद्रीत होने लगा। इसका नतीजा यह निकला कि औधोगिक विकास ने संसाधनों का केंद्रीकरण शहरों की तरफ कर दिया, वहीं पर ग्रामीण विकास के कई कार्यक्रम चले लेकिन बढ़ती जनसंख्या और गाँवों में रोजगार के अभावों ने पलायन को बढ़ाया। हालाँकि हरित क्रांति (यादव 2017) के कारण कुछ इलाकों में कृषि के क्षेत्र में स्मृद्धि जरूर आई लेकिन विविधतापूर्ण भौगोलिक परिस्थितियाँ होने के कारण इसका रोजगार पर व्यापक असर नहीं हुआ, सिर्फ देष की खाद्य सुरक्षा सुनिष्चित हो पाई। अतः पलायन को इसने कुछ पंजाब और हरियाणा जैसे राज्यों में कम किया लेकिन देषव्यापी प्रभाव बनाने में विफली रही।

पलायन की उपनिवेषवादी प्रवृतियों में विदेष में पलायन करना एक प्रमुख प्रवृति रही जो एक 'श्रेष्ठता बोध' के कारण सामाजिक स्वीकृति प्राप्त करने लगी। अब श्रमिक के अतिरिक्त सेवा क्षेत्रों में भी भारतीय लोग बहुतायत में विदेषों में जाने लगे थे, यह एक तरह से 'प्रतिभा पलायन' बन गया जिसके कारण देष के अनेक प्रतिभाषाली लोग विदेषों में न केवल रोजगार के लिए गए बल्कि वहीं के होकर रह गए इसका देष की अर्थव्यवस्था पर विपरीत प्रभाव पड़ा क्योंकि उन नागरिकों को विकसित करने में देष के काफी संसाधन लगे लेकिन उनकी उत्पादकता का लाभ नहीं मिल पाया। इस प्रवृति के बढ़ने के पीछे के कारणों में देष में रोजगार का अभाव तो था, साथ ही एक औपनिवेषिक सोच भी रही जो विदेष को स्वदेष से श्रेष्ठ समझने के दृष्टिकोण पर आधारित रही।

भारतीय समाज के अंग्रेजों के सम्पर्क में आने, आधुनिक षिक्षा और औपनिवेषिक सोच का प्रभाव व्यापक रूप से यहाँ के मध्यम वर्ग (चंद्रा 2015) पर पड़ा।यह वर्ग समाज के पूरे दायरे में धारणा निर्माण का कार्य भी करने लगा क्योंकि एक तो षिक्षा इसके पास आ गई थी और दूसरा आर्थिक संसाधन भी आए। इसलिए नीचे का तबका भी इससे प्रभावित हुआ और यह धारणा व्यापक रूप से समाज में फैल गई। इसके प्रभाव मे आकर आम मध्यम वर्ग सेवा क्षेत्र में जाने लगा और इसका प्रभाव समाज में जमने लगा, चूंकि सेवा क्षेत्र भी शहरों तरफ फैला था। इसलिए सेवा क्षेत्र के प्रति ललक बढ़ने के कारण गाँवों से शहरों की तरफ पलायन बढ़ा।

पलायन की प्रवृतियों के बीच अंतर्संबंध हैं जो एक–दूसरे को प्रभावित करते रहे हैं, इसलिए प्रमुख षिक्षा संस्थानों का बड़े शहरों में स्थापित होना भी पहले लोगों को षिक्षा के लिए शहरों की तरफ पलायन करवाता है और फिर वे लोग स्थाई रूप से वहीं बस जाते हैं। इन प्रवृतियों के प्रभाव में देखा जा सकता है कि एक तरफ बड़े शहरों में जनसंख्या का दवाब बड़ा है और वहाँ पर समुचित व्यवस्थाओं के नहीं होने के कारण लोगों के जीवनस्तर में भी गिरावट आई है। पलायन की प्रक्रिया इतनी बहुआयामी है कि गाँवों से सीधे बड़े शहरों, गाँवों से छोटे शहरों और फिर वहाँ से महानगरों की तरफ पलायन होता है। इसका तात्पर्य यह है कि पलायन हमेषा छोटी इकाई से बड़ी इकाई की तरफ होता है क्योंकि संसाधनों का केंद्रीयकरण भी इसी तरह से हो रहा होता है।

कुछ इलाके तो प्राकृतिक रूप से ऐसी विषम परिस्थितियों में थे कि वहाँ पर हर साल पलायन जीवन का एक अनिवार्य हिस्सा हो गया था जैसे राजस्थान सहित कई भागों

में अकालों का प्रकोप और देष के एक बहुत बड़े हिस्से में बाढ़ का ऐसा प्रभाव की पूरा जनजीवन ही तबाह होने की स्थिति तक पहुँच जाता। इसलिए यहा पर मौसमी पलायन सदैव पाया गया है। स्वतंत्रता के बाद भी लोग लगातार उन इलाकों में लोग निकल जाते जहाँ पर कृषि अच्छी होती। उनके साथ न सिर्फ पूरा परिवार होता बल्कि पशुधन भी साथ रखते जिसको खुले घास वाले मैदानों और घाटियों में चराकर अपना विपरीत समय गुजारते। इन लोगों के पलायन को कुछ हद तक नहरीकरण और बाँधों ने रोका। बाखड़ा नांगल बाँध बनने के कारण उससे निकली नहरों ने राजस्थान, पंजाब और हरियाणा के बड़े हिस्से से पलायन को रोकने की परिस्थितियाँ पैदा कीं। चूँकि इससे सरप्लस चारा और अनाज भी पैदा हुआ जिसके कारण से देष के अन्य हिस्सों में ग्रामीण अर्थव्यवस्था को एक संबल मिला। हाँलाकि एक समय के बाद में यह स्थिति भी बनी कि खेती के अच्छे विकास और विस्तार के कारण उतरप्रदेष और बिहार से खेत मजदूरों का पलायन इन सिंचित नहरी क्षेत्रों की तरफ होने लगा। ये एक तरह से पलायन क नये केंद्र बने जहाँ पर मजदूरों के रूप में आंतरिक पलायन अन्य राज्यों या आसपास के इलाकों से हुआ और सम्पन्नता आने के कारण बाहरी पलायन के रूप में यहाँ से दूसरे देषों में पलायन की प्रवृतियाँ सामने आईं।

भारत की जाति व्यवस्था की सरंचना भी पलायन को बढाने के प्रमुख देषज प्रवृतियों के रूप में रही जो स्वतंत्रता के पश्चात भी जारी रही क्योंकि जाति व्यवस्था के कारण से समाज के संसाधनों का वितरण भी एक स्तरीकरण के आधार पर हो गया जिससे एक बहुत बड़ा हिस्सा संसाधनों से वंचित हो गया जो एक स्थाई श्रमिक के रूप में पलायन करता रहा। स्वतंत्रता के बाद न तो बड़े पैमाने पर भूवितरण हो सके जिसके कारण भूमिहीनों स्थानीय स्तर पर रोजगार मिल जाता और वे पलायन नहीं करते। केरल और पष्चिमी बंगाल सहित विनोबा भावे के आंदोलन के अतिरिक्त भूवितरण का अभाव रहा और इसी तरह से जाति के उन्मूलन के प्रष्न पर भी प्रभावी कदम नहीं उठाए जा सके। स्त्रियों का पलायन एक स्थाई पलायन बन गया जो कि पृतसतात्मक व्यवस्था के कारण हो पा रहा है क्योंकि वे स्थाई रूप से शादी के बाद अपने पिता के घर से पति के घर को पलायन करने को अभिषप्त हैं, यह भी स्वतंत्रता के पश्चात जारी रहा।

निष्कर्ष – सार रूप में कहा जा सकता है कि स्वतंत्र भारत में लोकल्याणकारी योजनाओं ने कुछ सीमा तक पलायन का कम किया लेकिन उसे पूरी तरह से मिटा नहीं पाई क्योंकि इसके देषज और उपनिवेषवादी प्रवृतियाँ लगातार समाज में उपस्थित थीं जिसके कारण पलायन कहीं पर सघन तो कहीं पर विरल अवस्था में मौजूद रहा।

REFERENCES

1. ग्रीन बर्ग, आर मरा पीपी (सं.), बर्ड ऑफ टू वर्ल्डस्: दि इकोलॉजी एंड इवोल्यूषन ऑफ माइग्रषन, जॉन हॉप्किंस यूनोवर्सिटी प्रेस, 2005।
2. कॉफी डब्ल्यू जे, ज्योग्राफीः टुर्ल्डस अ जनरल स्पेषियल सिस्टम अप्रोच, मेथुएन एंड कम्पनी लिमिटेड, लंदन, 1981।
3. नारौजी दादाभाई, पोवर्टी एंड अनब्रिटिष रूल इन इंडिया, हैरिटेज पब्लिकेषन, दिल्ली, 2020।
4. किषोर गिरीराज, पहला गिरमिटया, राजपाल एंड सन्ज, दिल्ली, 2013।
5. गाँधी महात्मा, हिंद स्वराज, नवजीवन प्रकाषन अहमदाबाद, 1909।
6. ठाकुर बिखारी, बिदेषिया, वाणी प्रकाषन, दिल्ली, 2011।
7. भगवती जगदीष, इंडिया इन ट्रांजिषनः फ्रईंग द इकॉनोमी, ऑक्सफोर्ड यूनीवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 1993।
8. यादव रतनलाल, हरित क्रांति की पीली पत्तियाँ, अनराधा प्रकाषन, दिल्ली, 2017।
9. चंद्रा बिपिन, भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, हिन्द माध्यम क्रियान्वयन प्रकाषन, दिल्ली, 2015।